बुद्धवर्ष २५४३, फाल्गुन पूर्णिमा, १९ फरवरी, २००० वर्ष २९ अंक ८

धम्मवाणी

वितक्कूपसमेच यो रतो, असुभं भावयते सदा सतो।
एस खो व्यन्ति काहिति, एस छेज्जति मारबन्धनं॥

– धम्मपद ३५०.

जो संकल्प-विकल्पको शांत करनेमें लगा है, जो जागरूक रह कर सदा अशुभ को देखता है, वह मार के बंधन को काटेगा, वह (निर्वाणदर्शी) उसे समूल नष्ट करेगा।

धारण करे तो धर्म

क्या है भावनामयी प्रज्ञा

(जी-टीवी पर क्रमशः चौवालीस कड़ियों में प्रसारित पूज्य गुरुदेव के प्रवचनों की **तेरहवीं कड़ी**)

प्रज्ञा के तीन सोपान होते हैं। तीन सीढ़ियां होती हैं। पहली सीढ़ी है – श्रुतमयी प्रज्ञा। दूसरी है – चिंतनमयी प्रज्ञा और तीसरी है – भावनामयी प्रज्ञा। श्रुतमयी प्रज्ञा माने श्रुतज्ञान। कुछ सुना है, किसी महापुरुष को सम्यक ज्ञान जागा, बोधिज्ञान जागा और उसने अपना अनुभव शब्दों में प्रकट किया। हमने सुना। या उसकी वाणी किसी पुस्तक में छपी और हमने पढ़ी। तो यह सुना हुआ ज्ञान। यह पढ़ा हुआ ज्ञान। अपना नहीं है, लेकिन हम श्रद्धा के मारे स्वीकार करते हैं। उस महापुरुष पर हमें बहुत श्रद्धा है। उसकी वाणी पर हमें बहुत श्रद्धा है। बचपन से सुनते आये हैं, सुनते आये हैं और बचपन से श्रद्धा जगाते आये हैं, श्रद्धा जगाते आये हैं। तो उस श्रद्धा के मारे उसकी वाणी को स्वीकार करते हैं। अभी अपना अनुभव नहीं है। किसी अन्य की वाणी है, हमने सुनी है और श्रद्धा से स्वीकार की है।

कभी-कभी यह भी होता है कि कोई बात बहुत श्रद्धा से स्वीकार की लेकिन फिर मन में कोई तर्क जागा कि अरे, यह बात तो तर्कसंगत नहीं लगती, युक्तिसंगत नहीं लगती। इसको कैसे माना जाय? तो वह अपने बुजुर्गों के सामने, अपने समाज के नेताओं के सामने, आचार्यों के सामने अपना यह प्रश्न रखता है तो कोई-कोई घबरा उठता है। अरे, यह क्या करने लगा? यह शंका करता है। हमारे महापुरुष की वाणी पर शंका करता है? अरे, अपने धर्मग्रंथों की वाणी पर शंका करता है? तो उसे डांट पड़ती है। उसे धमकी दी जाती है कि ऐसा तर्क-कुतर्क ऐसी शंका की तो जानते हो, क्या परिणाम होगा? मरने के बाद घोर नरक मिलेगा। ऐसा कुंभीपाक नरक मिलेगा, एक कुंभ में तुझे डाल करके पकाया जायगा। ऐसा कुंभीपाक नरक! यह सारा वर्णन सुनते-सुनते बेचारे के रोंगटे खड़े होते हैं। घबरा उठता है, डरने लगता है। ना बाबा, ना, मैं ऐसे नरक में जाने को तैयार नहीं। यह बात मान लेने से नरक जाने से बचता हूं तो मैं मानता हूं, बाबा! मानता हूं। भयभीत होकर के माना।

कभी-कभी यही संप्रदाय के नेता, घर के, समाज के बुजुर्ग यह भी कहते हैं कि देख, हमारे शास्त्रों में जो लिखा है उसको अगर तू बिना किसी तर्क-कुतर्क के जैसा है वैसा ही मानता चला जायगा तो जानता है क्या होगा? मरने के बाद तुझे स्वर्ग मिलेगा। फिर उस स्वर्ग की व्याख्या। अरे, ऐसा स्वर्ग, ऐसा स्वर्ग, जिसमें ऐसी अप्सराएं और ऐसा दिव्य पान, वहां ऐसी दिव्य मदिरा पीने को मिलेगी। बेचारे के मुँह में पानी आये। अरे, मान लेने मात्र से ऐसा स्वर्ग मिलता है! मैं तो अभी मानता हूं भाई! तो मान रहा है ना! या तो श्रद्धा या अंधश्रद्धा के मारे मान रहा है या भयभीत हो कर मान रहा है या लोभ-लुब्ध हो करके मान रहा है। केवल मान रहा है, जाना नहीं। जानना बहुत दूर है। यह श्रुतज्ञान हुआ।

श्रुतज्ञान हमेशा हानिकारक हो, ऐसा नहीं। बड़ा कल्याणकारी भी होता है। श्रुतज्ञान से हमारे मन में प्रेरणा जागती है। समझदार आदमी हो तो उसके मन में प्रेरणा जागेगी। उसे मार्गदर्शन होगा। उसके मन में ऐसी प्रेरणा जागेगी तो अगला कदम उठाएगा और वह अगला कदम है चिंतनमयी प्रज्ञा। अब तक जो सुना है, पढ़ा है उस पर चिंतन करेगा, मनन करेगा। चिंतन-मनन करना मनुष्य का सहज स्वभाव है, नैसर्गिक स्वभाव है। तो मनन करके देखता है। तर्क के तराजू पर तोल कर देखता है। बुद्धि की कसौटी पर कस कर देखता है। यह जो कुछ मैंने पढ़ा है, जो कुछ मैंने सुना है क्या यह तर्क-संगत है? क्या यह युक्तिसंगत है? क्या यह न्याय-संगत है? क्या यह मानने लायक है? मानने लायक है तो स्वीकार करता है।

एक कठिनाई इसमें भी आती है कि जो व्यक्ति जिस परिवार में जन्मा है, जिस माहौल में पला है, वहां जिस एक प्रकार की मान्यता को सुनते-सुनते उसकी बुद्धि पर, उसके मानस पर उस मान्यता के बहुत मोटे-मोटे लेप लगे हैं तो चिंतन करता है तो अपनी इस मान्यता के न्यायीकरण का ही करता है कि यह बिल्कुल ठीक है। उसका वकील बन जाता है, बहुत ठीक है। इसमें क्या गलती हो सकती है? तो सारे तर्क, सारा चिंतन इसी दिशा में चलता है कि इसे कैसे सत्य सिद्ध करूं? केवल बुद्धि से समझा है ना! और बुद्धि की अपनी सीमा होती है, तर्कों की अपनी सीमा होती है। एक ही बात आज बड़ी तर्क-संगत लगे, कल वही बड़ी असंगत लगने लग जाय। कौन जाने? बुद्धि की सीमा से किसी बात को स्वीकार कर रहा है तो स्वीकार ही कर रहा है, मान ही रहा है, अभी जाना नहीं। पराया ज्ञान है। श्रुतज्ञान भी पराया ज्ञान है। चिंतन ज्ञान भी पराया ज्ञान है। ज्ञान किसी और का है। हमने श्रद्धा से स्वीकार कर लिया

या तर्कों से स्वीकार कर लिया। पर अभी जाना नहीं।

जो तीसरा सोपान है वह है भावनामयी प्रज्ञा। उस ओर जाये तो कल्याण हो जाय। अन्यथा होता यह है कि कभी-कभी केवल श्रुतज्ञान ही प्राप्त करके ऐसा गर्व चढ़ा लेता है अपने सिर पर – ऐसा घमंड, ऐसा अहंकार कि अरे, अब मेरे जैसा ज्ञानी कौन! मैं खूब जान गया। जाना कुछ नहीं, केवल मान रहा है। लेकिन समझता है, मैं खूब जान गया। अब तो धर्म को इतनी अच्छी तरह जान गया कि लोगों को समझा सकता हूं, प्रवचन दे सकता हूं, पुस्तकें लिख सकता हूं। अरे, मेरा क्या कहना! मेरे जैसा ज्ञानी कौन? चिंतन-मनन करके ही अगर स्वीकार कर लिया और उसकी वजह से गर्व जगाया तो और कठिनाई हो गयी। अब तो तर्कों से लोगों के सामने सिद्ध करके बता सकता हूं कि मेरी जो मान्यता है वही ठीक है।

स्वयं अपनी अनुभूति पर उतारने की प्रेरणा ही नहीं जागी। अरे भाई, जो श्रुतज्ञान हमारे कल्याण के लिए है, हमारे मंगल के लिए है, हमें प्रेरणा देकर के, मार्गदर्शन देकर के अगला कदम उठाने के लिए है उस श्रुतज्ञान के बाद हम चिंतन-ज्ञान जगायें। चिंतन-ज्ञान जो हमारे मंगल के लिए है, कल्याण के लिए है, वह हमें प्रेरणा देकर के मार्गदर्शन दे ताकि हम भावनामयी प्रज्ञा की ओर आगे बढ़ें। कल्याण होगा भावनामयी प्रज्ञा से ही।

क्या होती है भावनामयी प्रज्ञा? २५०० वर्षों में भाषा बदल जाती है, शब्द बदल जाते हैं, शब्दों के अर्थ बदल जाते हैं। आज तो 'भावना' शब्द का अर्थ भावुकता, जैसे सेंटिमेंटल। २५००-२६०० वर्ष पूर्व के भारत की भाषा में भावना का यह अर्थ नहीं था। वह जो भावित होता है माने अनुभूति पर उतर रहा है और बार-बार भावित होता है। वही बात बार-बार, बार-बार अनुभव पर उतर रही है, तो उसे कहते थे – **"भावितो बहुलीकतो, भावितो बहुलीकतो"**। उस सत्य को अनुभूति पर बार-बार, बार-बार उतारते-उतारते उसके बारे में पूरी जानकारी होने लगती है। यह भावनामयी प्रज्ञा है। यह अपनी प्रज्ञा है। अपनी अनुभूति के बल पर जागी हुई प्रज्ञा। कल्याण यह करेगी, मुक्ति की ओर यह ले जायगी, विकारों से छुटकारा यह दिलाएगी। दुःखों से, बंधनों से छुटकारा यह दिलाएगी। यह भावित प्रज्ञा जागे। अनुभूति वाली प्रज्ञा जागे। प्रज्ञा शब्द का अर्थ ही – प्रत्यक्ष ज्ञान।

श्रुत और चिंतन प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं है, परोक्ष ज्ञान है। किसी और का ज्ञान है। यह भावनामयी प्रज्ञा जागती है तो प्रत्यक्ष ज्ञान है। अपनी अनुभूति का ज्ञान है। भले आरंभ में अनुभूति एक सीमा तक ही होगी। हमारा मानस अनुभूति करने के कितना लायक हुआ? अपने भीतर की सच्चाई जिस सीमा तक अनुभूति पर उतरी, उतनी-उतनी भावित प्रज्ञा। फिर आगे बढ़ते गये; बार-बार, बार-बार काम करते गये तो उससे अधिक सूक्ष्म सच्चाई, उससे अधिक सूक्ष्म सच्चाई। यों इस भावित प्रज्ञा के क्षेत्र में आगे बढ़ते-बढ़ते शरीर और चित्त, इन दोनों के बारे में जो सच्चाई है, वह सारी की सारी अनुभूति पर उतर जाय। स्थूल से स्थूल सच्चाई से लेकर सूक्ष्म से सूक्ष्म सच्चाई तक, भीतर का यह सारा प्रपंच अनुभूति से समझ में आने लगे। यह शरीर का प्रपंच, यह चित्त का प्रपंच और यह इन दोनों की मिली-जुली जीवन-धारा का प्रपंच खूब समझ में आने लगे और समझ में आते-आते हम अपने विकारों से मुक्त होते चले जायँ।

क्योंकि शरीर और चित्त का जो प्रपंच है, जो क्षेत्र है, वह अनित्यता का क्षेत्र है। साधक अपनी अनुभूतियों से जानेगा कि यह अनित्य है। देख, उत्पन्न हुआ और देर-सबेर नष्ट हो गया। उत्पाद हुआ, व्यय हो गया। उदय-हुआ, व्यय हो गया। यों अनुभूति से जानते-जानते इसके प्रति जो आसक्ति है वह टूटती चली जायगी। इसके प्रति जो राग है, द्वेष है, वह दूर होता चला जायगा और मानस उतना-उतना निर्मल होता चला जायगा। यह बींधती हुई प्रज्ञा जितनी निर्मल होगी, उतनी ही तीक्ष्ण हो जायगी। बींधती हुई प्रज्ञा छेदन करने वाली, भेदन करने वाली प्रज्ञा हुई तो जहां-जहां कोई सच्चाई बहुत घनीभूत होकर के आयी, चाहे शारीरिक आयी, चाहे चैतसिक आयी, जहां-जहां घनीभूत होकर के आयी, अब यह प्रज्ञा उसे बींधते-बींधते, उसका विघटन करते-करते, विभाजन करते-करते, विश्लेषण करते-करते, उससे अधिक सूक्ष्म, उससे अधिक सूक्ष्म, सूक्ष्मतर, सूक्ष्मतम अवस्थाओं में ले जाती जाय। वहां जो विकारों का संग्रह है उसका निष्कासन होता जाय और यों होते-होते सारे अनित्य क्षेत्र की जानकारी हो जाय। इसकी वजह से भीतर जो राग या द्वेष जागा करते थे, उस स्वभाव को तोड़ा। इसके प्रति जो आसक्ति थी, इसके प्रति जो मोह था, इसके प्रति जो अज्ञान था उसे तोड़ा तो चित्त निर्मल होते-होते ऐसी अवस्था पर पहुँच गया कि अब इस सारे अनित्य क्षेत्र के परे 'नित्य' का साक्षात्कार हो गया। 'ध्रुव' का साक्षात्कार हो गया। 'शाश्वत' का साक्षात्कार हो गया। वह जो अजर है, अमर है। यह सारा का सारा क्षेत्र अनित्य है। उत्पन्न होता है, नष्ट होता है। उत्पन्न होता है, नष्ट होता है। और वहां न कुछ उत्पन्न होता है, न कुछ नष्ट होता है। तो दोनों को जान गया। अनित्य क्या है, इसे भी जान गया। नित्य क्या है, इसे भी जान गया। तो प्रज्ञा फलवती हुई, सफल हुई। यह अनुभूति वाली प्रज्ञा ही सफल होगी। श्रुतमयी प्रज्ञा यह सारा कुछ नहीं कर सकती। चिंतनमयी प्रज्ञा यह सारा अनुभव नहीं कर सकती। वह प्रेरणा दे सकती है, मार्गदर्शन दे सकती है। अनुभूति से हुई भावनामयी प्रज्ञा जागेगी तो मुक्त अवस्था तक ले जायगी। लाभ उसी से होगा।

इसे एक उदाहरण से समझें। एक आदमी बहुत भूखा है, भोजन के लिए किसी रेस्टॉरेंट में चला गया। बढ़िया रेस्टॉरेंट है, बैठ गया। बैरे ने लाकर के मीनू का कार्ड सामने रख दिया। उसे पढ़ता है। अरे, आज तो यहां बड़ा स्वादिष्ट भोजन बना है। मुँह में पानी आता है।

यह एक घटना घटी। फिर बैरे को बुला कर आर्डर दे दिया, अमुक-अमुक भोजन ले आओ। अभी उसको आने में पांच-दस मिनट लगेंगे तो प्रतीक्षा करता हुआ क्या करे? इधर-उधर देखता है। आसपास की कुर्सियों पर और लोग जिनको भोजन परोसा जा चुका, वे भोजन कर रहे हैं। उनके चेहरों को देखता है तो चिंतन करता है, 'सचमुच भोजन बड़ा स्वादिष्ट होगा। देखो इनके चेहरे से मालूम होता है, इनको बड़ा स्वादिष्ट लग रहा है।' यह दूसरी घटना घटी।

तीसरी घटना – बैरे ने लाकर के भोजन परोस दिया और वह स्वयं उसे चखने लगा, उसे खाने लगा। तो पहला श्रुतज्ञान है। वह मीनू का कार्ड कहता है कि भोजन ऐसा है, ऐसा है। उससे मुँह में पानी जरूर आया लेकिन भोजन चखा नहीं। उससे उस भूखे आदमी का पेट भरा नहीं। दूसरा चिंतन ज्ञान है। अब वह चिंतन से, बुद्धि से, तर्क से देखता है कि जब-जब लोग अच्छा भोजन करते हैं, स्वादिष्ट भोजन खाते हैं तो उनके चेहरे पर कैसे भाव होते हैं। अरे, ऐसा ही भाव इनके चेहरे पर है। तो उसकी बुद्धि कहती है कि अवश्य भोजन बड़ा स्वादिष्ट होगा। इससे इतना ही हुआ कि मुँह में फिर पानी आया। अभी भोजन चखा नहीं। उसके पेट की ज्वाला उससे बुझी नहीं। यह चिंतन ज्ञान हुआ। और तीसरा प्रत्यक्ष ज्ञान – जब सचमुच भोजन

परोसा गया, चखा और उससे अपनी भूख मिटायी। यह भावनामयी प्रज्ञा हुई। लाभ इसी से होगा।

एक और उदाहरण से समझें। कभी-कभी कोई बात इन उदाहरणों से, उपमाओं से ज्यादा स्पष्ट हो जाती है। जैसे – कोई रोगी आदमी अपने डॉक्टर के पास गया। डॉक्टर ने जांच करके देखा कि तुझे यह रोग है और इसके लिए यह दवा ठीक रहेगी। उसने एक चिट पर दवा के नाम लिख दिये। वह बड़ा खुश होकर अपने घर आया। उस डॉक्टर के प्रति उसे बड़ी श्रद्धा है। होनी भी चाहिए। जिस डॉक्टर से, जिस वैद्य से, जिस हकीम से अपना इलाज कराते हैं उसके प्रति श्रद्धा ही नहीं हो तो इलाज कैसे करायेंगे? लेकिन श्रद्धा जब अंधश्रद्धा बन जाय तो?

अब क्या करने लगा? उस वैद्य का, उस डॉक्टर का, उस चिकित्सक का एक चित्र अपने पूजाघर में रखता है, उसके सामने धूप जलाता है, दीप जलाता है। उसे पुष्प चढ़ाता है, नैवेद्य चढ़ाता है और बड़ी श्रद्धा के साथ हाथ जोड़ करके तीन बार नमस्कार करता है। फिर वह पुर्जा निकालकर के पाठ करता है –"दो गोली सुबह, दो गोली दोपहर को, दो गोली शाम को; दो गोली सुबह, दो गोली दोपहर ...।" अरे, क्या हो गया? क्या कर रहे हो? इससे क्या लाभ होगा? नहीं समझता, क्योंकि श्रद्धा अंधश्रद्धा बन गयी। यह श्रुतज्ञान है। पुर्जे पर कुछ लिखा है और हम ऐसे अंधे हो गये कि बस के वल उसका पाठ किये जा रहे हैं।

दूसरी घटना, कोई दूसरा रोगी है। उसको भी ऐसी ही दवा की चिट डॉक्टर ने लिख कर दे दी। घर आया, सोचता है –अरे, इस दवा से मैं कैसे ठीक हो जाऊंगा? तो फिर भागा-भागा डॉक्टर के पास जाता है। उससे बहस करता है, तर्क करता है। कैसे ठीक हो जाऊंगा? डॉक्टर समझदार है। उसके तर्कों को शांत करते हुए समझाता है, देख भाई, तुझे अमुक रोग है और इस रोग का यह मूल कारण है। इस दवा से यह कारण दूर हो जायगा और मूल कारण का निवारण हुआ तो रोग का निवारण अपने-आप हो जायगा। बड़ा खुश हुआ। अरे, मेरे डॉक्टर का क्या कहना! इतना समझदार डॉक्टर! ऐसी दवा दी है इसने कि रोग जड़ों से निकल जायगा। रोग का कारण ही निकल जायगा तो रोग रहेगा कैसे? ओ, मेरे डॉक्टर का क्या कहना, मेरे डॉक्टर का क्या कहना! मेरे डॉक्टर की इस दवा का क्या कहना! घर आकर के बड़ी प्रशंसा करता है अपने डॉक्टर की। हमारा डॉक्टर ऐसा, हमारा वैद्य ऐसा और झगड़ता है पड़ोसियों से। अरे, तुम्हारा डॉक्टर किस काम का? मेरा डॉक्टर देख, कैसा महान! तुम्हारे डॉक्टर की दवा किस काम की? देख, मेरे डॉक्टर की दवा कैसी है! दवा का सेवन यह भी नहीं करता। अरे, कहां उलझ गये रे!

यही होता है जब कोई महापुरुष आता है और संसार के लोगों को दुःखी देखता है, रोगी देखता है तो बड़ी करुणा से कि ये रोग मुक्त हो जायँ, उन्हें धर्म की औषधि देता है। विपश्यना की औषधि देता है। अरे, इसका सेवन कर लेगा तो सारे दुःखों से मुक्त हो जायगा। उसका तो सेवन करते नहीं। या तो पहली अवस्था की तरह उसके प्रति इतनी श्रद्धा जगायी, इतनी श्रद्धा जगायी कि उसकी मूर्तियां बना करके, उसके चित्र बना करके, उसे फूल चढ़ाते हैं, दीप जलाते हैं। कोई दोष की बात नहीं है। लेकिन दवा तो लेनी चाहिए ना! दवा नहीं ले रहे तो गाड़ी वहीं अटक गयी। या फिर जैसे दूसरी बात हुई कि लड़ते हैं, झगड़ते हैं – हमारा महापुरुष ही सही माने में महापुरुष है। तुम लोग जिसको महापुरुष कहते हो वह महापुरुष नहीं है। सही महापुरुष तो यही है। हमारे महापुरुष ने जो ज्ञान दिया, हमारे महापुरुष ने जो विद्या सिखायी, हमारे महापुरुष ने जो धर्म सिखाया वह ही सही है, युक्तिसंगत है, न्यायसंगत है, कल्याणकारी है। तुम्हारे महापुरुष ने क्या सिखाया? उसने कैसी दवा दी? अरे, धर्म के नाम पर यही होता है ना! धर्म धारण नहीं करता। भावनामयी प्रज्ञा आयी तो धर्म धारण होने लगा।

यह भावनामयी प्रज्ञा कैसी है? पहले कोई धर्म की बात सुने तो सही। जो व्यक्ति अपने जीवन में धर्म की शुद्धता की बात पहले कभी सुन ही नहीं पाया, वह कैसे अपनी भावनामयी प्रज्ञा जगायेगा? कैसे धर्म धारण कर सकेगा? कैसे धर्म के रास्ते आगे बढ़ सकेगा? तो धर्म का पहला सोपान बहुत जरूरी कि धर्म को सुने। फिर बहुत जरूरी है – उस पर चिंतन करे, मनन करे। अंधश्रद्धा से नहीं स्वीकार कर ले। खूब चिंतन-मनन करके समझे। बात तो बहुत ठीक है, बड़ी तर्क संगत है, बड़ी युक्तिसंगत है, तब स्वीकार करे। फिर तो केवल स्वीकार ही नहीं करे बल्कि उसे अनुभूति पर उतारना शुरू कर दे। जैसे-जैसे भावनामयी प्रज्ञा के पथ पर आगे बढ़ने लगा, वैसे-वैसे धर्म धारण करने के पथ पर आगे बढ़ने लगा। भीतर ही भीतर जो अनुभव हो रहे हैं, उस सत्य को अनुभूति से जान रहा है। जो अनित्य है उसे अनुभूति से जान रहा है – यह अनित्य है, नश्वर है, भंगुर है।

अरे, जो अनित्य है, नश्वर है, भंगुर है उसे क्या अच्छा कहूं? वह कितना ही सुखद लगे, क्या अच्छा कहूं? नश्वर ही तो है। प्रतिक्षण उत्पन्न होता है, नष्ट होता है। और वह अगर बुरा लगे, अप्रिय लगे, दुःखद लगे तो उसके प्रति क्या द्वेष जगाऊं? जो समाप्त हुए जा रहा है, उत्पन्न होता है, नष्ट होता है उसके प्रति राग नहीं, द्वेष नहीं। उसके प्रति 'मैं' का भाव नहीं, 'मेरे' का भाव नहीं। बस, मुक्ति का रास्ता मिल गया। कदम-कदम आगे बढ़ते हुए मुक्त अवस्था तक पहुँच ही जायगा। जितने कदम उठा रहा है वे मुक्ति के ही कदम हैं, मुक्ति के ही कदम हैं। अरे, बड़ा मंगल होता है जब श्रुतज्ञान जागे, चिंतनज्ञान जागे और वह भावित प्रज्ञा में परिवर्तित हो जाय। खूब मंगल होगा, खूब कल्याण होगा। धर्म के इस शुद्ध स्वरूप को समझते हुए, अनुभूतियों पर उतारते हुए जो-जो व्यक्ति धर्म के रास्ते आगे बढ़ता है, मंगल ही होता है, कल्याण ही होता है। स्वस्ति ही होती है, मुक्ति ही होती है।

"धम्म सोत" विपश्यना साधना केंद्र, गांव - रहका, पो. सोहना, जिला- गुड़गांव (हरियाणा).

दिल्ली के कनॉट प्लेस से लगभग ५० कि.मी. की दूरी पर स्थित, सोनीपत के समीप कमासपुर क्षेत्र के एक छोटे-से गांव में, हरे-भरे खेतों के बीच लगभग १६ एकड़ के भूखंड पर **"धम्म सोत"** वि. केंद्र का निर्माण आरंभ हो चुका है। कमासपुर वही स्थान है जहां भगवान बुद्ध ने कुरु-प्रदेश में सबसे महत्त्वपूर्ण धर्मोपदेश 'सतिपट्ठान सुत्त' का पारायण किया था। यह धरती आज भी धर्ममय वातावरण से दीप्त है।

केंद्र के प्रथम चरण के निर्माण में लगभग ६० साधकों के लिए आवास (३६ पुरुष, २४ महिलाएं), आचार्य निवास, कार्यालय, धर्मसेवक निवास आदि का कार्य लगभग पूरा हो चुका है। साधकों के अमूल्य सहयोग से धीरे-धीरे इसकी क्षमता २५० तक करनी है। इसका प्रथम **उद्घाटन शिविर पूज्य गुरुदेव के सान्निध्य में ८ से १९ मार्च तक** लगना निश्चित हुआ है। यहां ११ मार्च की प्रातः ९ से ११ बजे तक पूज्य गुरुदेव साधकों को 'विपश्यना' देंगे और दोपहर १२:३० से १:३० बजे प्रेस कान्फरेंस होगी।

इस केंद्र पर होने वाले भावी शिविर 'कार्यक्रम-सूची में अंकित हैं।

जयपुर व दिल्ली में पूज्य गुरुदेव के अन्य कार्यक्रम व प्रवचन शृंखला

८ मार्च को 'धम्मथली' जयपुर के वि. केंद्र पर साधकों को 'विपश्यना' देंगे।
८ व ९ मार्च को जयपुर में सार्वजनिक प्रवचन. (१० को दिल्ली के लिए प्रस्थान)
११ मार्च की प्रातः ९ से ११ तक **"धम्म सोत"** के साधकों को 'विपश्यना' देंगे
१२ मार्च को 'लाजिक स्टेट फार्म हाउस में पुराने साधकों के लिए **एक दिवसीय शिविर** (पूज्य गुरुदेव के सान्निध्य में).
१३ मार्च को दोपहर 'दिल्ली पुलिस अकादमी' में तथा
सायं ६ से ७:३० बजे तक **लोक सभा के सदस्यों तथा उनके परिवारजनों** के लिए धर्म प्रवचन.

१४ मार्च को 'धम्म तिहाड़' जेल में कैदियों के लिए प्रवचन.

१५ मार्च को 'मेरठ' शहर में सायं ६ से ७:३० तक प्रवचन व प्रश्नोत्तर

१६, १७ तथा १८ मार्च को **तीन दिवसीय प्रवचन-माला**, जिसके विषय व समय का विवरण इस प्रकार है –

स्थानः तालकटोरा इनडोर स्टेडियम, शंकर रोड, नई दिल्ली.

समयः पुराने साधकों की सामूहिक साधना – प्रतिदिन सायं ५ से ६, तथा प्रवचन व प्रश्नोत्तर सायं ६ से ७:३०.

विषयः (क्रमशः) **१.** 'विपश्यना' : स्वभाव में परिवर्तन की वैज्ञानिक विधि. **२.** नई सहस्त्राब्दी में 'विपश्यना' की प्रासंगिकता एवं उपयोगिता. **३.** 'विपश्यना' : भवबंधनों से मुक्ति का उपाय.

अधिक विवरण के लिए संपर्कः विपश्यना साधना संस्थान, फोनः ००१- ६४५२७७२.

E-mail= <logicstat@vsnl.com>

१९ मार्च को दिल्ली से काठमांडू (नेपाल) के लिए प्रस्थान.

नए उत्तरदायित्व : आचार्य

1-2. Mr Martin & Mrs Deni Stephens, to serve Dhamma Neru, Spain and Portugal
3-4. Dr Jacques & Mrs Denise Tenzel, to serve Dhamma Munda, North California Vip. Centre

वरिष्ठ सहायक आचार्य

१. श्रीमती शीलादेवी चौरसिया, कलकत्ता
2. Ven. Sister Upekkha, Sri Lanka
3. Mrs Kusuma Abeyasinghe, Sri Lanka
4. Mrs B.K. Milina Senadheera, Sri Lanka
5. Mr Geevaka de Soyaza, Sri Lanka
6. Dr. (Mrs) Shelina Hetherington, U.K.

नव नियुक्तियां : सहायक आचार्य

१-२. श्री हर्षद एवं श्रीमती हंसा पटेल, अहमदाबाद
३. श्रीमती गीता संपत, मुंबई
४. प्रो. चंद्रकिशोर शर्मा, रेवा
५. श्री मनहर शेलदिया, गांधीनगर
६. श्री नटवरसिंह राठोर, मालपुर
७. डॉ. अच्युत पाल, थाना
८. श्रीमती सुधाबेन पटेल, अहमदाबाद
९. श्री ब्रह्मानंद गोयल, महासमुंद
१०. श्री छविलाल साहू, रायपुर
११. श्री करमचंद लील, यू. के.
१२-१३. श्री सुरेंद्र एवं श्रीमती उर्मिला नाइक, अमेरिका
14. Ven. Nagita, Sri Lanka
15. Mr T.B. Wijesinghe, Sri Lanka
16. Ven. Sister Vajira, "
17. Miss Komi Mendis, "
18. Ms Eilona Ariel, Israel
19. Mr. Martin Haig, Austr.
20-21. Mr. Remi Oriot & Mrs. Marie Fouilleul-Oriot, France
22. Mr. Victor M. Lledo, Spain
23. Eveline Schwarz, Switzerland
24. Mrs. Claudia Scholtz, Switzerland
25. Mrs Marianne G. Fromont, Switzerland
26-27. Mr Richard Paul & Mrs Deborah Leigh Harding, U.k.
28. Mr. Dennis Ferman, U.S.A.
29-30. Mr. & Mrs. Norm & Debra Kosky, U.S.A.
31.Bhikkhuni Ming Chia Shih, Taiwan. (क्रमशः जारी) (बाल-शिविर शि. अगले अंक में)

दूहा धरम रा

धरम पठण कल्याणप्रद, धरम स्रवण कल्याण।
पण साचो कल्याण तो, धारण व्है जद जाण॥
ग्रंथ ग्यान गरबा गयो, हुयी न सत्य प्रतीत।
कितना दिन टिकसी भला, या बाळू री भींत॥
औसध रो पानो पढै, सेवन करै न लेस।
बढै रोग पर रोग ही, बढै क्लेस पर क्लेस॥
पाठ करंतां जुग गया, मिलै न सच रो सार।
धार्‌यां पारायण हुवै, पूगै परलै पार॥
सहज सरल कथनी घणी, करणी कठिन अपार।
कोरी कथनी बांझड़ी, करणी कर दे पार॥
बिरथा तरक-बितरक है, बिरथा बाद-बिवाद।
धार्‌यां ही निरमळ हुवै, चाखै इमरत स्वाद॥

मेसर्स गो गो गारमेंट्स
३१ –४२, भांगवाड़ी शॉपिंग आर्केड,
१ला माला, कालबादेवी रोड, मुंबई - ४००००२.
☎ ०२२- २०५०४१४
की मंगल कामनाओं सहित

दोहे धर्म के

धरम कथिक जब धरम का, करे नहीं व्यवहार।
खुद भी डूबे, जगत को, ले डूबे मझधार॥
मनन करे चिंतन करे, यही मनुज का धर्म।
आंख मूंद पीछे चले, यह पशुओं का कर्म॥
डूबे वाद-विवाद में, धर्म न धारण होय।
लगे मोक्ष के तर्क में, देय मोक्ष ही खोय॥
बिन औषध सेवन किये, कहां रोग का अंत।
जीवन में धारण करे, धर्म होय फलवंत॥
केवल चिंतन मनन से, क्या पाया मतिमान।
धारण कर ले धर्म को, तभी होय कल्याण॥
धारण कर ले बावरे! बिन धारे ना त्राण।
योग-क्षेम दातार है, धर्म बड़ा बलवान॥

मेसर्स मोतीलाल बनारसीदास
• महालक्ष्मी मंदिर लेन, ८ महालक्ष्मी चैंबर्स, २२ वार्डन रोड, मुंबई-४०००२६.
☎-४९२३५२६, • सनस प्लाजा, शॉप ११-१३, १३०२, सुभाष नगर, पुणे-४११००२.
☎-४८६१९०, • दिल्ली- २९११९८५, • पटना- ६७१४४२, • वाराणसी- ३५२३३१,
• बैंगलोर- २२१५३८९, • चेन्नई- ४९८२३१५, • कलकत्ता२४३४८७४
की मंगल कामनाओंसहित

'विपश्यना विशोधन विन्यास' के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादकः राम प्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२४०३, दूरभाष : (०२५५३) ८४०८६, ८४०७६.
मुद्रण स्थान : अक्षर चित्र प्रिंटिंग प्रेस, ६९- बी रोड, सातपुर, नाशिक-४२२००७. **बुद्धवर्ष २५४३, फाल्गुन पूर्णिमा, १९ फरवरी, २०००**

वार्षिक शुल्क रु. २०/-, विदेश में US $ 10
आजीवन शुल्क रु. २५०/-, " US $ 100

'विपश्यना' रजि. नं. १९१५६/७१.
Regn. No. AR/NSM-46/2000,

Concessional rates of Postage under Licenced to post without Prepayment

Posting day- **Purnima of Every Month**
Posted at Igatpuri-422403, Dist. Nashik

If not deliverd please return to:-

विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - ४२२४०३
जिला-नाशिक, महाराष्ट्र भारत
दूरभाष : (०२५५३) ८४०७६
फैक्सः (०२५५३) ८४१७६
Website: www.vri.dhamma.org
E-mail= <dhamma@vsnl.com>